पाकिस्तान की नींद उड़ाने वाला समझौता

1948 में जब मध्य-पूर्व में यहूदी देश इजरायल की स्थापना हुई थी, उस समय ही उसके पड़ोसी और अरब देशों ने उसे अलग-थलग कर दिया था. इन देशों का कहना था कि जब तक गाजा, वेस्ट बैंक और इजरायल द्वारा कब्जाए गए इलाकों में एक अलग मुस्लिम राष्ट्र – फिलीस्तीन – को मान्यता नहीं मिलती, तब तक वे इजरायल से किसी तरह के संबंध नहीं रखेंगे. हालांकि बाद में इजरायल के दो पड़ोसी मुस्लिम देशों – मिस्त्र और जॉर्डन – ने इससे अलग राह चुन ली. पहले 1979 में मिस्त्र ने इज़रायल के साथ औपचारिक संबंधों की शुरुआत की, फिर जॉर्डन ने 1994 में इस दिशा में क़दम बढ़ाया. लेकिन, पिछले दिनों अमेरिका ने एक ऐसा ऐलान किया जिसकी किसी ने शायद ही कल्पना की होगी. राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने कहा कि संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) और इजरायल ने बीती बातों को पीछे छोड़ एक-दूसरे से दोस्ती का मन बनाया है. और ये दोनों सामान्य कूटनीतिक संबंध स्थापित करने जा रहे हैं. इसके बाद इजरायल और यूएई ने भी इसकी पुष्टि की.

इस साल की शुरुआत में इजरायल में हुए आम चुनावों के दौरान प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने वहां के लोगों से वादा किया था कि वे वेस्ट बैंक क्षेत्र को अपने कब्जे में ले लेंगे. वेस्ट बैंक की बात करें तो इजरायल की ओर से यहां पर लाखों यहूदियों को बसाया जा चुका है. लेकिन इसी हिस्से में 20 लाख से ज्यादा फिलीस्तीनी लोग भी रहते हैं. पूर्वी यरूशलम और गाजा पट्टी के अलावा वेस्ट बैंक पर भी फिलीस्तीन अपना दावा करता है. लेकिन बेंजामिन नेतन्याहू यहां लाखों यहूदियों को बसाकर इस क्षेत्र को अपने अधिकार में लेना चाहते हैं. बेंजामिन नेतन्याहू ने दोबारा प्रधानमंत्री बनने के बाद बीते 28 मई को घोषणा की कि वे जुलाई में वेस्ट बैंक को इजरायल के कब्जे में ले लेंगे. अमेरिकी मीडिया की मानें तो इजरायली प्रधानमंत्री के इस बयान के बाद यूएई ने अंदरखाने इजरायल की सरकार से बातचीत शुरू की. यूएई की सरकार की तरफ से इजरायल की जनता का भी मूड बदलने की कोशिश की गयी. छह जून को अमेरिका में यूएई के राजदूत यूसेफ अल ओतैबा ने इजरायल के एक प्रमुख अखबार में लेख लिखा जिसमें उन्होंने इजरायल द्वारा वेस्ट बैंक पर कब्जा करने को उसके लिए ही एक खतरनाक फैसला बताया.

हिब्रू भाषा में प्रकाशित इस लेख में उन्होंने लिखा, 'इजरायल के वेस्ट बैंक पर कब्जा करने से निश्चित तौर पर उसकी उन कोशिशों को तगड़ा झटका जिनके जरिये वह यूएई और अन्य खाड़ी देशों के साथ सुरक्षा, सांस्कृतिक और आर्थिक संबंधों को बेहतर करना चाहता है. यह तब और सही नहीं है, जब अरब भी इजरायल को लेकर अपनी वर्षों पुरानी सोच को बदलने की कोशिश कर रहा है.' ओतैबा ने अपने इस लेख में यह भी लिखा कि अगर अरब से इजरायल के संबंध बेहतर होते हैं तो इजरायल को बेहतर सुरक्षा और बड़ा बाजार मिलने के साथ ही मुस्लिम देशों में उसकी स्वीकार्यता भी बढ़ेगी. उन्होंने साफ़ शब्दों में लिखा कि वेस्ट बैंक पर कब्जा करने से संबंध बेहतर नहीं होंगे बल्कि यह मुस्लिम देशों को उकसाने वाली कार्रवाई होगी.

खबरों के मुताबिक इस मामले में दोनों देशों के अधिकारियों ने अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप से

बातचीत की. ट्रंप की मध्यस्थता के बाद यूएई इस बात पर तैयार हुआ कि अगर इजरायल वेस्ट बैंक पर कब्जा करने का इरादा छोड़ दे तो वह उससे कूटनीतिक संबंध स्थापित करने के लिए तैयार है. बताते हैं कि इसके लिए बेंजामिन नेतन्याहू भी तैयार हो गए. नेतन्याहू के लिए यह फैसला अपनी छवि सुधारने के एक बड़े मौके जैसा भी था. उनके ऊपर लगे भ्रष्टाचार के आरोपों के चलते उन्हें लंबे समय से काफी आलोचनाओं का सामना करना पड़ रहा है. तमाम राष्ट्रवादी नीतियों के बाद भी छह महीनों में लगातार दो बार हुए आम चुनावों में वे पूर्ण बहुमत हासिल नहीं कर पाए. इसके अलावा कोरोना महामारी के दौरान इजरायल में सरकारी लापरवाही के लिए भी उन्हीं को जिम्मेदार ठहराया जा रहा है. महज 88 लाख की आबादी वाले इजरायल में कोरोना के एक लाख मामले सामने आ चुके हैं.

हालांकि, जानकार इस मामले में और भी बहुत कुछ बताते हैं. लंदन स्थित इंटरनेशनल इंस्टीटच्यूट फ़ॉर स्ट्रैटेजिक स्टडीज़ के इमाइल होकायम एक ब्रिटिश न्यूज़ चैनल से बातचीत में कहते हैं कि यूएई के युवराज क्राउन प्रिंस शेख़ मोहम्मद बिन ज़ायद के लिए यह समझौता एक जुआ जैसा है, लेकिन यह एक ऐसा जुआ है जिसमें सारे पत्ते उनके ही पक्ष में हैं. होकायम के मुताबिक इस समझौते से यूएई की स्थिरता पर कोई असर नहीं पड़ेगा. इससे यूएई को अमेरिका में अपनी अच्छी छवि बनाने में मदद मिलेगी, जो यमन युद्ध में उसके शामिल होने के कारण ख़राब हो गयी थी. साथ ही अब वह बिना रोक-टोक अमेरिका से हर तरह के हथियार भी खरीद सकेगा.

हथियारों की खरीद यूएई के लिए कितना मायने रखती है इसका पता यूएई के विदेश राज्य मंत्री अनवर गर्गश के एक बयान से लगता है. बीते शुक्रवार को उन्होंने कहा कि इजरायल से समझौता होने के बाद अब यूएई को उम्मीद है कि उसे अमेरिका से एफ-35 लड़ाकू विमान मिल जाएंगे जिसकी मांग वह काफी पहले से कर रहा है. अमेरिका ने अत्याधुनिक तकनीक से लैस एफ-35 लड़ाकू विमान अपने यूरोपीय सहयोगियों के अलावा केवल तुर्की, दक्षिण कोरिया, जापान और इज़रायल को ही दिए हैं. मध्य-पूर्व में इजरायल की सैन्य मजबूती बनाये रखने की अमेरिकी नीति के चलते उसने यूएई और सऊदी अरब को यह विमान देने पर रोक लगा रखी थी.

विदेश मामलों के जानकार यूएई के इजरायल के करीब जाने की एक वजह ईरान का डर भी बताते हैं, जो हाल में ईरान और चीन के बीच हुए ऐतिहासिक समझौते के चलते और बढ़ गया है. पश्चिम एशिया की राजनीति पर करीब से निगाह रखने वाले जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी स्थित सेंटर फॉर वेस्ट एशियन स्टडीज के प्रोफेसर एके पाशा सत्याग्रह से बातचीत में कहते हैं, 'इस समझौते को ईरान की बढ़ती ताकत के मद्देनजर किया गया है. यूएई और इजरायल दोनों ही ईरान के परमाणु कार्यक्रम के विरोध में हैं. दोनों ही देश नहीं चाहते हैं कि वो अपनी सैन्य क्षमता में इज़ाफा करे क्योंकि इससे इस पूरे क्षेत्र में अस्थिरता का खतरा बढ़ जाएगा. ऐसे में ईरान के बढ़ते कदमों को रोकने के लिए यूएई को इजरायल का साथ चाहिए.' प्रोफेसर पाशा आगे कहते हैं कि इस समय पूरा अरब जगत ईरान से डरा हुआ है, इस समझौते के बाद ईरान को इजरायल की फौज के उसके घर के बाहर तक आने का डर रहेगा. ये कहीं न कहीं अरब जगत के दूसरे देशों के लिए सुरक्षा की गारंटी भी होगा.

सत्याग्रह से हुई बातचीत के दौरान एके पाशा इस मामले में एक और बात भी जोड़ते हैं. उनके मुताबिक, 'इस समझौते के पीछे एक वजह यह भी है कि अमेरिका मध्य-पूर्व से निकलना चाहता है और अब तक

इस क्षेत्र में (ईरान के खिलाफ अरब देशों को एकजुट रखने की) जो जिम्मेदारी वह निभाता आ रहा था, उसे अब वो अपने विश्वासपात्र देश इजरायल के हाथ में सौंपना चाहता है.'

अमेरिकी थिंक टैंक सीएफआर में मध्य-पूर्व मामलों के विशेषज्ञ स्टीवन कुक ब्लूमबर्ग से बातचीत में कहते हैं, 'इजरायल और यूएई के बीच हुई यह डील क्षेत्रीय खतरों के खिलाफ सुरक्षा सहयोग बढ़ाना है, विशेष रूप से ईरान और अन्य देशों में स्थिति उसके समर्थन वाले शिया लड़ाके इन दोनों देशों को करीब लाने के पीछे का प्रमुख कारण हैं.' कुछ जानकार यह भी कहते हैं कि यह फैसला सऊदी अरब और यूएई ने मिलकर किया है. दरअसल, इन दोनों को यह डर था कि अगर इजरायल ने फिलीस्तीन के दावे वाले वेस्ट बैंक इलाके में कब्जा कर लिया तो ईरान को इजरायल और अमेरिका के खिलाफ मुस्लिम देशों को एक एकजुट करने का मौका मिल जाएगा. ऐसे में इससे कहीं न कहीं ईरान को फायदा मिलेगा और कूटनीतिक रूप से सऊदी अरब और यूएई अकेले पड़ जाएंगे.

ईरान के राजनेताओं के बयानों से भी यही लगता है कि यूएई और इजरायल के करीब आने का एक प्रमुख कारण ईरान ही है. ईरान के जाने-माने राजनेता और पूर्व सांसद अली मोतिहारी अपने एक ट्वीट में लिखते हैं, 'यूएई के शासकों द्वारा विश्वासघात किये जाने के अलावा, हम भी यूएई के इजरायल के साथ संबंधों के लिए जिम्मेदार हैं. हमने अरबों को भयभीत किया और उन्हें इज़रायल के पास पहुंचा दिया... उनका (हमें लेकर) यह डर खत्म किया जाना चाहिए.'

यूएई और इजरायल के करीब आने की खबर के बाद सबसे तीखे ब्यान ईरान की ओर से ही आये हैं. ईरान के राष्ट्रपति हसन रूहानी ने चेतावनी देते हुए कहा है, 'यदि इस समझौते से मध्य-पूर्व क्षेत्र में इजरायल का प्रभाव बढ़ता है, तो चीजें बदल जाएंगी और उनसे हम अलग तरीके से निपटेंगे.' ईरान के सशस्त्र बल के प्रमुख मेजर जनरल मोहम्मद बकेरी ने भी कहा, 'अगर फारस की खाड़ी में कुछ भी होता है और ईरान की सुरक्षा खतरे में पड़ती है तो भी हम संयुक्त अरब अमीरात को इसका दोष देंगे और इसे सहन नहीं करेंगे.'

जानकार यूएई और इजरायल के करीब आने के पीछे अमेरिका की बड़ी भूमिका तो बताते ही हैं, साथ ही यह भी कहते हैं डोनाल्ड ट्रंप ने ऐसा इसलिए करवाया क्योंकि उन्हें इसका आगामी राष्ट्रपति चुनाव में फायदा मिल सकता है. मध्य-पूर्व के कई देशों में भारत के राजदूत रह चुके नवदीप सूरी अपनी एक टिप्पणी में लिखते हैं, 'यूएई और इजरायल के बीच हुई इस डील ने डोनाल्ड ट्रंप के चुनाव प्रचार को बड़ा फायदा पहुंचाया है, इसने उन्हें एक ऐसा हथियार दे दिया है जिससे वे एक बार फिर यहूदी और इवेंजलिकल्स समुदाय के मतदाताओं के बीच अपनी पैठ बना सकते हैं.'

अमेरिका में ईसाइयों की एक परंपरावादी शाखा 'इवेंजलिस्ट' है. अमेरिका में 'इवेंजलिस्ट' से जुड़े ईसाइयों की संख्या करीब नौ करोड़ है इन्हें 'इवेंजलिकल्स' कहते हैं. 2016 में हुए राष्ट्रपति चुनाव में इवेंजलिकल्स ने डोनाल्ड ट्रंप को राष्ट्रपति बनवाने में अहम भूमिका निभाई थी. एक सर्वेक्षण के मुताबिक करीब 81 फीसदी इवेंजलिकल्स ने डोनाल्ड ट्रंप को वोट दिया था जबकि केवल 16 फीसदी ने ही हिलेरी क्लिंटन पर विश्वास जताया था. इवेंजलिकल्स द्वारा डोनाल्ड ट्रंप को इतना बड़ा समर्थन देने के पीछे एक बड़ी वजह इजरायल ही था. तब डोनाल्ड ट्रंप ने चुनाव प्रचार के दौरान इवेंजलिकल्स से

वादा किया था कि वे राष्ट्रपति बनने पर यरुशलम को इजरायल की राजधानी घोषित करेंगे.

विदेश मामलों के जानकार एक और बात भी बताते हैं. इनके मुताबिक डोनाल्ड ट्रंप और उनके दामाद एवं मध्य-पूर्व मामलों में राष्ट्रपति के सलाहकार जेरेड कुशनर ने इजरायल और फिलीस्तीन के बीच शांति करवाने के मकसद से एक समझौता तैयार किया था. लेकिन फिलीस्तीन ने इस समझौते को मानने से इंकार कर दिया. उसका कहना है कि यह समझौता उसके साथ भेदभाव करता है और इसमें ज्यादातर क्षेत्र इजरायल को देने की बात कही गयी है. मध्य-पूर्व मामलों के जानकारों के मुताबिक यूएई और इजरायल के संबंध अच्छे करवाकर अमेरिका फिलीस्तीन पर इस समझौते के लिए तैयार होने का दबाव डालना चाहता है. वह यह दिखाना चाहता है कि अगर फिलीस्तीन उसकी शर्तों को नहीं मनाता तो वे सभी मुस्लिम देश जो अभी उसका (फिलीस्तीन का) साथ दे रहे हैं, धीरे-धीरे इजरायल के साथ आ जायेंगे. यूएई के इजरायल से संबंध बेहतर होने के बाद खबरें आम हैं कि मुस्लिम देश ओमान और बहरीन भी इजरायल के साथ अपने राजनयिक संबंध स्थापित करने पर विचार कर रहे हैं.

संयुक्त अरब अमीरात और इजरायल के बीच सामान्य राजनयिक संबंध स्थापित होने की घोषणा के अगले ही दिन इन दोनों देशों के विदेश मंत्रियों ने भारतीय विदेश मंत्री एस जयशंकर को फोन कर इस फैसले की जानकारी दी. जयशंकर का कहना था कि यूएई और इजरायल दोनों ही भारत के प्रमुख रणनीतिक साझीदार हैं ऐसे में उनका करीब आना स्वागत करने योग्य कदम है.

विदेश मामलों के जानकारों का कहना है कि मध्य-पूर्व में ईरान लंबे समय से भारत का प्रमुख साथी था, लेकिन पिछले दिनों ईरान और चीन के बीच जिस तरह की डील हुई है और उसके बाद चाबहार जैसे प्रोजेक्ट से जिस तरह भारत को बाहर किया गया, उसके बाद ईरान और भारत के संबंध पुराने दौर में पहुंचना बेहद मुश्किल है. इन लोगों के मुताबिक अब इजरायल, सऊदी अरब और यूएई के साथ भारत की रणनीतिक साझेदारी ही मध्य-पूर्व में भारत के संबंधों का एक प्रमुख स्तंभ है. ऐसे में यूएई और इजरायल का करीब आना इस क्षेत्र में भारत की पकड़ और मजबूत करेगा.

मध्य-पूर्व में यह बड़ा घटनाक्रम उस समय सामने आया है जब पाकिस्तान की यूएई और सऊदी अरब से तनातनी चल रही है. कश्मीर मुद्दे को मुस्लिम देशों इस्लामिक सहयोग संगठन (ओआईसी) में न उठाने के चलते पाकिस्तान यूएई और सऊदी अरब से नाराज है. हाल ही में पाकिस्तानी विदेश मंत्री शाह महमूद कुरैशी ने जब इस मसले पर सऊदी अरब के खिलाफ जमकर बयानबाजी कर दी तो सऊदी अरब पाकिस्तान से इतना ज्यादा नाराज हो गया कि उसने पाकिस्तान को कर्ज के रूप में दी गयी रकम तक वापस ले ली.

इजरायल से संबंधों को लेकर भी पाकिस्तान की राय यूएई से अलग है. पाकिस्तान का कहना है कि इजरायल उसका दुश्मन है, इसलिए वह कभी उससे संबंध बेहतर नहीं कर सकता. पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान के मुताबिक यदि पाकिस्तान ने फिलीस्तीनियों के उत्पीड़न को नजरअंदाज करते हुए इज़रायल को स्वीकार किया, तो उसे कश्मीर को भी छोड़ना पड़ेगा. कुछ जानकारों का मानना है कि चीन के ईरान के करीब जाने की वजह से पाकिस्तान अब ईरान की तरफ ही रहेगा.

पाकिस्तान के इस रुख का भारत को दो तरह से फायदा मिल सकता है एक तो यूएई और सऊदी अरब के

दबदबे वाले ओआईसी में कश्मीर मुद्दा शायद लंबे समय के लिए ठंडे बस्ते में डाल दिया जाएगा. दूसरा पाकिस्तान में आतंकी गतिविधियों के लिए अरब देशों से मिलने वाली सहायता बंद हो जाएगी. इससे भारत में पाकिस्तान का फैलाया आतंकवाद कमजोर पड़ सकता है.

साभार- https://satyagrah.scroll.in/ से